पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

सुदेश्वर साह

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

2021 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार मामला सं. 2962

04 दिसंबर 2023

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अनिल कुमार सिन्हा)

विचार के लिए मुद्दा

मुद्दा यह उठा कि "क्या विभागीय कार्यवाही में 100 प्रतिशत पेंशन रोकी जा सकती है?"

हेडनोट्स

यह रिट याचिका, प्राथमिक शिक्षा, शिक्षा विभाग, बिहार सरकार, पटना द्वारा जारी ज्ञापन संख्या 8/आ-05-37/2014 931, दिनांक 01.12.2020 में निहित दंड आदेश के विरुद्ध है - जिसके तहत याचिकाकर्ता की 100 प्रतिशत पेंशन रोक दी गई है - और आगे यह आदेश दिया गया है कि वह निलंबन की तिथि से अपनी सेवानिवृत्ति तक, अर्थात 01.04.2014 से 31.01.2017 तक और 01.02.2017 से आदेश पारित होने की तिथि तक निर्वाह भत्ते का हकदार होगा - याचिकाकर्ता अवकाश नकदीकरण के साथ अनंतिम पेंशन का हकदार होगा।

प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने जाँच के दौरान आरोपों के समर्थन में मौखिक साक्ष्य दर्ज करने के लिए कोई गवाह पेश नहीं किया और जाँच रिपोर्ट केवल प्रस्तुतकर्ता अधिकारी द्वारा दायर जवाब के आधार पर प्रस्तुत की गई - आरोपों को साबित करने के लिए कोई मौखिक साक्ष्य पेश नहीं किया गया और/या कोई भी गवाह पेश करके कोई दस्तावेज़ प्रदर्शित नहीं किया गया - दस्तावेजों की सामग्री, जैसे प्रथम सूचना रिपोर्ट, स्वीकृति आदेश आदि भी जाँच के दौरान साबित नहीं हुए - जाँच रिपोर्ट यह नहीं दर्शाती है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई भी

आरोप साबित हुआ - जाँच अधिकारी का निष्कर्ष यह है कि पाँच में से चार आरोप साबित नहीं हुए और आरोप संख्या 2, यानी याचिकाकर्ता की 25,000/- रुपये के साथ रंगे हाथों गिरफ्तारी के संबंध में, जाँच अधिकारी ने राय दी कि चूँकि आपराधिक मामला चल रहा है, इसलिए आपराधिक मुकदमे के समापन की प्रतीक्षा करना बेहतर होगा - अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने केवल आरोप संख्याओं को दोहराया। अपने दूसरे कारण बताओ नोटिस में धारा 1 और 2 को शामिल किया, जिससे यह जांच रिपोर्ट में दर्ज मतभेद का मुद्दा बन गया -जो सी.सी.ए. नियम, 2005 की धारा 18 के अनुरूप नहीं है - सी.सी.ए. नियम, 2005 के नियम 18 (2) के अनुसार, यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी, किसी आरोप के संबंध में जाँच प्राधिकारी के निष्कर्षों से असहमत है, तो उसे अपनी असहमति के कारण दर्ज करने होंगे और ऐसे आरोप पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना होगा, यदि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त हैं - वर्तमान मामला साक्ष्य रहित मामला है - और याचिकाकर्ता के विरुद्ध दी गई सजा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है।

निर्णय दिया गया,

यह स्पष्ट है कि जाँच के दौरान या अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अभियोजन की मंजूरी से संबंधित दस्तावेजों को साबित करने के लिए जाँच रिपोर्ट से मतभेद होने के बाद किसी भी गवाह से पूछताछ नहीं की गई, जिसमें आक्षेपित आदेश पारित करने के लिए जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था, उनकी विषय-वस्तु भी शामिल है - आरोपों के ज्ञापन में विभाग द्वारा जाँच के दौरान जाँचे जाने/पेश किए जाने वाले किसी भी गवाह के नाम का उल्लेख नहीं है। शिकायतकर्ता, संजय कुमार झा, जाँच अधिकारी, या ट्रैप-पूर्व ज्ञापन और ट्रैप-पश्चात ज्ञापन के गवाह, घटना के अन्य सभी गवाहों से जाँच के दौरान पूछताछ नहीं की गई - यहाँ तक कि, पुलिस अधीक्षक, सतर्कता का स्वीकृति/अभियोजन पत्र, जिस पर अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने मतभेद के बिंदु के रूप में भरोसा किया था, जाँच के किसी भी चरण में और/या

याचिकाकर्ता को मतभेद के बिंदुओं के साथ दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी करने के बाद प्रस्तुत या सिद्ध नहीं किया गया - इसलिए, यह बिना सबूत का मामला है।

जाँच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है। दोषी अधिकारी के विरुद्ध लगाए गए आरोप सिद्ध होने चाहिए। जाँच अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पक्षकारों द्वारा अभिलेख में प्रस्तुत सामग्री पर विचार करके किसी निष्कर्ष पर पहुँचे। जाँच अधिकारी द्वारा सभी अभियुक्तों के विरुद्ध जाँच के दौरान एकत्रित किए गए कथित साक्ष्य को अनुशासनात्मक कार्यवाही में साक्ष्य नहीं माना जा सकता - आरोपों को सिद्ध करने के लिए विभाग को जाँच अधिकारी के समक्ष आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करने होंगे, ताकि यह आरोप न लगे कि जाँच अधिकारी ने अभियोजक के साथ-साथ न्यायाधीश के रूप में भी कार्य किया है - सर्वोच्च न्यायालय ने, उपरोक्त मामले में, जाँच अधिकारी की भूमिका को परिभाषित किया है, जो जाँच करते समय एक अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करता है और एक स्वतंत्र निर्णायक की स्थिति में होता है। उसका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों की जाँच करना है, यहाँ तक कि दोषी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी, यह देखने के लिए कि क्या आरोपों को सिद्ध करने के लिए अखंडित साक्ष्य पर्याप्त हैं, लेकिन वर्तमान मामले में, जांच अधिकारी ने विभाग द्वारा प्रस्तुत किसी भी गवाह की जाँच नहीं की और पाया कि आरोप सिद्ध नहीं हुए।

तदनुसार, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और यहाँ पहले हुई चर्चा के आधार पर, यह स्थापित होता है कि जाँच के दौरान, कोई मौखिक जाँच नहीं की गई, कोई मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत/जांच नहीं की गई, कोई दस्तावेज़ सिद्ध नहीं हुए, तदनुसार, मेरी राय में, जाँच स्वयं ही दोषपूर्ण हो गई है।

तदनुसार, मेरा मानना है कि जाँच के चरण में और साथ ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा असहमति दर्ज करने के चरण में गंभीर प्रक्रियात्मक खामियाँ हैं।

इस प्रकार, मेरी राय में, दंड का आदेश और अपीलीय प्राधिकारी का आदेश, जिसमें

याचिकाकर्ता की पेंशन को 100 प्रतिशत जब्त करने का आदेश शामिल है, कायम नहीं रह सकता और इसे रद्द किया जाता है। जाँच रिपोर्ट और व्यक्त की गई असहमति को भी रद्द किया जाता है और मामले को नए सिरे से जाँच के लिए वापस भेजा जाता है, याचिकाकर्ता को पर्याप्त अवसर देने के बाद - नई जाँच इस आदेश की प्रति प्राप्त/प्रस्तुत होने की तिथि से अधिकतम छह महीने की अवधि के भीतर पूरी की जानी चाहिए।

उत्तरदाताओं को विभाग द्वारा भरोसा किए गए गवाहों और दस्तावेजों की सूची के साथ आरोप(ओं) का एक पूरक ज्ञापन याचिकाकर्ता को देने की स्वतंत्रता दी जाती है। चूँकि, सजा का आदेश रद्द कर दिया गया है, इसलिए याचिकाकर्ता को कानून में स्वीकार्य अनंतिम पेंशन और अन्य सेवानिवृत्ति देय राशि का भुगतान किया जाएगा।

न्याय दृष्टान्त

पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य बनाम कुंज बिहारी मिश्रा, **(1998) 7 एससीसी 84** में रिपोर्ट किया गया; रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य, **(2009) 2 एससीसी 570** में रिपोर्ट किया गया; उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा, **(2010) 2 एससीसी 772** में रिपोर्ट किया गया; अनिल कुमार बनाम बिहार राज्य एवं अन्य **(सी डब्ल्यू जे सी संख्या 280/2016)**

अधिनियमों की सूची

बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 2005; पेंशन नियमावली

मुख्य शब्दों की सूची

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम; सेवानिवृत्त; विभागीय कार्यवाही; बिहार सरकारी सेवक आचरण नियम 1976; अनुशासनात्मक प्राधिकारी; प्रक्रियात्मक चूक

प्रकरण से उत्पन्न

मेमो संख्या 8/आ-05-37/2014 931, दिनांक 01.12.2020 में निहित दंड आदेश को रद्द करने के लिए

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

याचिकाकर्ता/ओं की ओर से: श्री रणजीत कुमार, अधिवक्ता; श्री कुंदन कुमार, अधिवक्ता

उत्तरदाता/ओं की ओर से: श्री माधव प्रसाद यादव, जीपी 23; श्री अरविंद कुमार, एसी से जीपी 23

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: शारंग धर उपाध्याय, सेवानिवृत्त न्यायिक पदाधिकारी

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2021 की दीवानी **रिट क्षेत्राधिकार मामला सं. 2962**

==

सुदेश्वर साह, पिता- स्वर्गीय गया साह, निवासी गाँव-गोपालपुर, थाना-नौबतपुर, जिला-पटना

.... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम्

1. मुख्य सचिव, बिहार सरकार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य।
2. प्रधान सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार सरकार, पटना।
3. निदेशक, प्राथमिक शिक्षा विभाग, बिहार, पटना।
4. क्षेत्रीय शिक्षा उप निदेशक, तिरहुत प्रमंडल, मुजफ्फरपुर।
5. जिला कार्यक्रम अधिकारी, पदाधिकारी, स्थापना, मुजफ्फरपुर

.... उत्तरदाता/ओं

== =

उपस्थितिः

याचिकाकर्ता/ओं के लिए : श्री रंजीत कुमार

: श्री कुन्दन कुमार

उत्तरदाता/ओं के लिए : श्री माधव प्रसाद यादव, जी पी 23

: श्री अरविंद कुमार, ए सी से जी पी 23

==

समक्षः माननीय न्यायमूर्ति श्री अनिल कुमार सिन्हा

<u>न्याय और आदेश</u>

सी ए वी

दिनांक : 04-12-2023

वर्तमान रिट आवेदन याचिकाकर्ता द्वारा निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, शिक्षा

विभाग, बिहार सरकार, पटना द्वारा जारी ज्ञापन सं. 8/आ-05-37/2014 931, दिनांक 01.12.2020 में निहित दंड आदेश को दरकिनार करने के लिए दायर किया गया है, जिसके तहत याचिकाकर्ता की 100 प्रतिशत पेंशन रोक दी गई है और यह भी आदेश दिया गया है कि वह निलंबन की तारीख से सेवानिवृत्ति तक, अर्थात 01.04.2014 से 31.01.2017 निर्वाह भत्ते का हकदार होगा और 01.02.2017 से उक्त आदेश पारित होने की तिथि तक याचिकाकर्ता छुट्टी के बदले नकद भुगतान के साथ अनंतिम पेंशन का हकदार होगा।

2. इस रिट आवेदन को दायर कियेजाने के पीछे संक्षिप्त तथ्य यह है कि संबंधित समय पर, याचिकाकर्ता समस्तीपुर जिले में खंड शिक्षा पदाधिकारी के पद पर पदस्थापित थे। एक व्यक्ति सुनील कुमार ने निगरानी अन्वेषण ब्यूरो में शिकायत दर्ज कराई, जिसमें यह आरोप लगाया गया कि याचिकाकर्ता ने स्कूल के उन्नयन के लिए अनुकूल रिपोर्ट देने के एवज में अपने लिए तथा जिला कार्यक्रम पदाधिकारी के लिए 50, 000/- रुपये की मांग कर रहे थे,स्कूल का नाम, 'उत्क्रमित मध्य विद्यालय' है, जो समस्तीपुर जिले के सिलौत गांव में स्थित है।

3. उक्त शिकायत के आधार पर, निगरानी अन्वेषण ब्यूरो ने 01.04.2014 पर एक जाल बिछाया और याचिकाकर्ता को 25,000/- रुपये की राशि के साथ गिरफ्तार किया, जो उसके द्वारा रिश्वत के रूप में ली गई थी, पुलिस थाना कांड सं. 25/2004 के तहत भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7/13 (1-डी) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए प्राथमिकी दर्ज की गई। याचिकाकर्ता को उसी दिन हिरासत में ले लिया गया। निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, बिहार, पटना ने ज्ञापन सं. 569, दिनांक 29.04.2014 के तहत याचिकाकर्ता को 01.04.2014 से निलंबित कर दिया।

4. जमानत मिलने के बाद, याचिकाकर्ता के निलंबन को 11.08.2014 से रद्द कर दिया गया और विभागीय कार्यवाही शुरू करने के उद्देश्य से निदेशक, प्राथमिक शिक्षा,

पटना द्वारा ज्ञापन सं. 1151, दिनांक 26.09.2014 में निहित आदेश के तहत पुनः निलंबित कर दिया गया। ज्ञापन सं. 1411, दिनांक 15.12.2014 में निहित आदेश के अनुसार, निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, बिहार, पटना ने क्षेत्रीय उप निदेशक, शिक्षा विभाग, तिरहुत प्रभाग, मुजफ्फरपुर को जाँच अधिकारी और जिला कार्यक्रम अधिकारी (स्थापना), मुजफ्फरपुर को याचिकाकर्ता के खिलाफ शुरू की गई विभागीय कार्यवाही में प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के रूप में नियुक्त किया।

5. याचिकाकर्ता को उपरोक्त ज्ञापन सं. 1411 द्वारा आरोप पत्र (प्रपत्र क) दिया गया था, जिसमें उसके खिलाफ पांच आरोप लगाए गए थे, जो इस प्रकार हैंः

1. आरोप सं. 1- श्री सुनील कुमार झा, पिता- श्री दयानंद झा गाँव-सिलौत, पोस्ट - पोखराईरा, थाना- मुफस्सिल, जिला- समस्तीपुर से जिला कार्यक्रम अधिकारी, माध्यमिक शिक्षा और स्वयं के लिए आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के हेतु 50,000/- रुपये की रिश्वत मांगी;

2. आरोप सं. 2- निगरानी अन्वेषण ब्यूरो द्वारा 25,000/-रुपये की रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों गिरफ्तार किया गया।

3. आरोप सं. 3- सरकारी कर्मचारी आचरण संहिता का उल्लंघन किया।

4. आरोप सं. 4- आधिकारिक कर्त्तव्य के निर्वहन में लापरवाही; और

5. आरोप सं. 5- भ्रष्ट आचरण में लिप्त।

6. जाँच अधिकारी द्वारा जाँच रिपोर्ट (अनुलग्नक 4) 10.03.2015 को प्रस्तुत की गई थी और जाँच रिपोर्ट के अनुसार, चार आरोप साबित नहीं हुए थे और आरोप सं. 2, जो याचिकाकर्ता की 25,000/- रुपये के साथ रंगे हाथों गिरफ्तारी से संबंधित है, जांच अधिकारी ने राय दी है कि चूंकि आपराधिक मामला चल रहा है, इसलिए आपराधिक

मुकदमे के निष्कर्ष की प्रतीक्षा करना बेहतर होगा। दूसरे शब्दों में, जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को उसके खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों से बरी कर दिया है।

7. निदेशक, प्राथमिक शिक्षा ने पत्र सं 303, दिनांक 18.05.2015 के माध्यम से दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी किया, और याचिकाकर्ता को दूसरे कारण बताओ नोटिस का जवाब प्रस्तुत करने का निर्देश दिया।

8. याचिकाकर्ता ने आपराधिक मुकदमे के अंतिम निपटारे तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए 2015 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 8697 दायर किया। रिट आवेदन का निपटारा दिनांक 05.01.2016 के आदेश के माध्यम से किया गया था, जिसके तहत दिनांक 18.05.2015 के दूसरे कारण बताओ नोटिस को इस टिप्पणी के साथ रद्द कर दिया गया कि विभागीय कार्यवाही कानून के अनुसार नए सिरे से आगे बढ़ सकती है, लेकिन जांच रिपोर्ट के साथ असहमति के कारणों को जारी करने के बाद।

9. निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, ज्ञापन सं. 454, दिनांक 06.05.2016 के माध्यम से, याचिकाकर्ता को असहमति के कारणों के साथ नया दूसरा कारण बताओ नोटिस जारी किया, जिसमें उसे जवाब प्रस्तुत करने कहा गया।

10. याचिकाकर्ता ने 12.05.2016 को अपना जवाब प्रस्तुत किया और आरोप/आरोपों से इनकार कर दिया, लेकिन निदेशक, प्राथमिक शिक्षा ने याचिकाकर्ता को ज्ञापन सं. 725, दिनांक 29.07.2016 के माध्यम से खारिज कर दिया, जिसके खिलाफ याचिकाकर्ता ने प्रधान सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार, पटना के समक्ष 30.11.2017 को सेवा अपील दायर की जिसका निपटारा 24.09.2018 को हुआ, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता की सेवा अपील को खारिज कर दिया गया और बर्खास्तगी के आदेश की पुष्टि की गई।

11. याचिकाकर्ता इस बीच 31.01.2017 को सेवानिवृत्त हो गया।

12. बर्खास्तगी के आदेश से व्यथित याचिकाकर्ता ने एक और रिट आवेदन दायर किया, जिसका सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 21447 वर्ष 2018 था, जिसका निपटारा दिनांक 27.02.2020 के आदेश द्वारा किया गया, जिसके तहत याचिकाकर्ता की बर्खास्तगी के आदेश को रद्द कर दिया गया और प्रतिवादी अधिकारियों को उचित नया निर्णय लेने की स्वतंत्रता दी गयी। बिहार सरकारी कर्मचारी (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 2005 (संक्षेप में 'सी. सी. ए. नियम, 2005') के नियम 18 और **(1998) 7 एस. सी. सी. 84** में रिपोर्ट किए गए **पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य बनाम कुंज बिहारी मिश्रा** मामले में प्रतिपादित सिद्धांतों के अनुसार मतभेद के बिंदु पर याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर दिया गया। चूंकि याचिकाकर्ता पहले ही सेवानिवृत्त हो चुका था, इसलिए इस न्यायालय ने आगे कहा कि अनुशासन प्राधिकारी को इस मामले में बिहार पेंशन नियम, 1950 के नियम 43 (बी) का पालन करना आवश्यक है।

13. बिहार पेंशन नियम, 1950 की धारा 43 (बी) के तहत कार्यवाही को ज्ञापन सं. 673, दिनांक 15.07.2020 के माध्यम से परिवर्तित किया गया था और याचिकाकर्ता को पत्र, दिनांक 09.09.2020 (अनुलग्नक 17) के माध्यम से एक कारण बताओ/अंतर बिंदु नोटिस जारी किया गया था, जिसमें उनसे अपना जवाब प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था।

14. याचिकाकर्ता ने सभी आरोपों से इनकार करते हुए अपना जवाब प्रस्तुत किया, लेकिन आक्षेपित आदेश, दिनांक 01.12.2020 पारित किया गया, जिसे इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान रिट आवेदन में चुनौती दी गई है।

15. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने विवादित आदेश पर आरोप लगाते हुए तर्क दिया कि प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने जांच के दौरान आरोपों के समर्थन में मौखिक साक्ष्य दर्ज करने के लिए कोई गवाह पेश नहीं किया और जांच रिपोर्ट केवल प्रस्तुतकर्ता अधिकारी

द्वारा दायर जवाब के आधार पर प्रस्तुत की गई थी। आरोपों को साबित करने के लिए कोई मौखिक साक्ष्य नहीं दिया गया और/या किसी भी गवाह को पेश करके कोई दस्तावेज प्रदर्शित नहीं किए गए। दस्तावेजों, जैसे प्रथम सूचना रिपोर्ट, मंजूरी आदेश आदि भी जांच के दौरान साबित नहीं हुए। जाँच रिपोर्ट से यह नहीं पता चलता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई भी आरोप साबित हुआ था और तदनुसार, जाँच अधिकारी का निष्कर्ष यह है कि चार आरोप साबित नहीं हुए थे और आरोप सं. 2, अर्थात याचिकाकर्ता की 25,000/- रुपये के साथ रंगे हाथों गिरफ्तारी, जांच अधिकारी ने राय दी कि चूंकि आपराधिक मामला चल रहा है, इसलिए आपराधिक मुकदमे के समापन की प्रतीक्षा करना बेहतर होगा।

16. विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि अनुशासनिक अधिकारी ने अपने दूसरे कारण बताओ नोटिस, दिनांक 09.09.2020 (अनुलग्नक 17) में केवल आरोप सं. 1 और 2 को दोहराया, जिससे जांच रिपोर्ट में दर्ज मतभेद का बिंदु बन गया है, जो सी. सी. ए. नियम, 2005 की धारा 18 के अनुरूप नहीं है। सी. सी. ए. नियम, 2005 के नियम 18 (2) के अनुसार, यदि अनुशासनिक अधिकारी, आरोप के किसी भी अनुच्छेद पर जाँच प्राधिकारी के निष्कर्षों से असहमत है, तो उसे इस तरह की असहमति के लिए अपने कारणों को दर्ज करना होगा और ऐसे आरोप पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना होगा, यदि रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त हैं।

17. अंत में, उन्होंने तर्क दिया कि यह मामला बिना किसी सबूत का मामला है और याचिकाकर्ता के खिलाफ दी गई सजा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है।

18. अपने तर्क के समर्थन में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का हवाला देते हैं, जो **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक और अन्य** के मामले, **(2009) 2 एस. सी. सी. 570, उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा, (2010) 2 एस. सी. सी. 772** में रिपोर्ट किए गए, और इस न्यायालय का एक

निर्णय **अनिल कुमार बनाम बिहार राज्य और अन्य (2016 का सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 280)** के मामले में दिया गया।

19. इसके विपरीत, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता को, ब्लॉक शिक्षा अधिकारी, समस्तीपुर के रूप में तैनात रहते हुए, रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, जिसके लिए 2014 का सतर्कता पुलिस स्टेशन में भ्रष्टाचार के आरोप में मामला सं. 25 दर्ज किया गया था।

20. उन्होंने आगे दलील दी कि विभागीय कार्यवाही में, पद के दुरुपयोग और भ्रष्टाचार के आरोपों के सभी तथ्यों और परिस्थितियों की जांच की गई और भ्रष्टाचार के मामलों में शून्य सहिष्णुता की सरकारी नीति के तहत, याचिकाकर्ता को सजा दी गई क्योंकि ऐसा अधिकारी अशोभनीय है और सुशासन के लिए खतरा है और इस मामले को देखते हुए, विभाग को भ्रष्ट अधिकारियों से मुक्त करने के लिए याचिकाकर्ता की 100 प्रतिशत पेंशन को जब्त करने के दंड के आदेश को गलत नहीं ठहराया जा सकता है।

21. उन्होंने आगे तर्क दिया कि प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत कोई सीधा-सादा सूत्र नहीं है और इसका अनुप्रयोग तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। याचिकाकर्ता, जिसे रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया था, प्राकृतिक न्याय के उल्लंघन या मौलिक अधिकार के उल्लंघन की शिकायत नहीं कर सकता क्योंकि रिश्वत मांगने और भ्रष्टाचार में लिप्त होने का कोई मौलिक अधिकार नहीं है।

22. इसके बाद उन्होंने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता को पूरी अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप अवसर प्रदान किया गया था, जो 01.12.2020 के आदेश में शामिल था, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता की 100 प्रतिशत पेंशन जब्त कर ली गई थी।

23. बिहार सरकारी सेवक आचरण नियमावली 1976 के नियम 3 (i) में प्रावधान है कि प्रत्येक सरकारी कर्मचारी को हर समय पूर्ण ईमानदारी बनाए रखनी चाहिए और ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहिए जो एक सरकारी कर्मचारी के लिए अनुचित हो।

24. अंत में, उन्होंने दलील दी कि विभागीय कार्यवाही कानून के प्रावधानों के अनुसार की गई थी और याचिकाकर्ता को अपना बचाव पेश करने का अवसर दिया गया था और अपने बचाव पर विचार करने के बाद और उचित जांच के बाद, जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई और आरोप साबित हुए। इसके बाद उन्होंने दलील दी कि याचिकाकर्ता को अपना दूसरा कारण बताओ नोटिस प्रस्तुत करने का अवसर देने के बाद अनुशासनिक प्राधिकारी ने बर्खास्तगी का आदेश पारित किया, जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा बरकरार रखा गया है।

25. मैंने संबंधित पक्षों के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्रियों को ध्यान से देखा है।

26. आरोपों के ज्ञापन के अवलोकन से ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता पर पांच आरोप लगाए गए थे, जो याचिकाकर्ता द्वारा कथित रूप से 25,000/- रुपये की रिश्वत लेने से संबंधित थे और याचिकाकर्ता को रिश्वत की राशि के साथ रंगे हाथों पकड़ा गया था। याचिकाकर्ता ने जाँच के दौरान और दूसरे कारण बताओ नोटिस के जवाब में दिए गए अपने बचाव के बयान में सभी आरोपों से इनकार किया है। आपराधिक मामला अभी भी लंबित है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमति जताई, जिसने याचिकाकर्ता को उसके खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों से मुक्त कर दिया गया था और आरोप सं. 2 के लिए यह देखा गया है कि चूंकि आपराधिक मामला चल रहा है, इसलिए आपराधिक मुकदमे के समापन की प्रतीक्षा करना बेहतर होगा।

27. अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने दिनांक 09.09.2020 के पत्र द्वारा मतभेदों को व्यक्त करते हुए, आरोप सं. 1 और 2 से मतभेद का आधार केवल सतर्कता जाँच ब्यूरो के

पुलिस अधीक्षक के दिनांक 24.04.2014 के स्वीकृति पत्र के आधार पर बनाया और उक्त पत्र के खंड 1 के तहत, याचिकाकर्ता द्वारा 50,000/- रुपये की माँग की गई थी, जिसका सत्यापन सतर्कता जाँच ब्यूरो द्वारा किया गया था। आरोप सं. 2 से मतभेद व्यक्त करते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने इस बात को ध्यान में रखा है कि छापा मारने वाली टीम ने याचिकाकर्ता को 25,000/- रुपये की रिश्वत राशि के साथ गिरफ्तार किया था और बरामद नोटों की तुलना प्री-ट्रैप ज्ञापन में उल्लिखित जी.सी. नोटों से की गई थी और वे समान पाए गए थे। अनुशासनात्मक प्राधिकारी, उपरोक्त मतभेदों के आधार पर, इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि याचिकाकर्ता को 25,000/- रुपये की रिश्वत के साथ रंगे हाथों पकड़ा गया था और उसे गिरफ्तार कर लिया गया था। तदनुसार, सजा का आदेश पारित किया गया।

28. यह स्पष्ट है कि जांच के दौरान या अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अभियोजन की मंजूरी से संबंधित दस्तावेजों को साबित करने के लिए जांच रिपोर्ट से मतभेद होने के बाद किसी भी गवाह से पूछताछ नहीं की गई, जिसमें विवादित आदेश पारित करने के लिए जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया गया था, उनकी विषय-वस्तु भी शामिल है। आरोप पत्र में विभाग द्वारा जांच के दौरान पूछताछ/पेश किए जाने वाले किसी भी गवाह के नाम का उल्लेख नहीं है। शिकायतकर्ता, संजय कुमार झा, जांच अधिकारी, या ट्रैप-पूर्व ज्ञापन और ट्रैप-पश्चात ज्ञापन के गवाह, घटना के अन्य सभी गवाहों से जाँच के दौरान पूछताछ नहीं की गई। यहां तक कि पुलिस अधीक्षक, सतर्कता का अनुमोदन/अभियोजन पत्र, जिस पर अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने मतभेद के बिंदु के रूप में भरोसा किया था, को जांच के किसी भी चरण में और/या याचिकाकर्ता को दिए गए मतभेद बिंदुओं के साथ दूसरा कारण दिखाएँ नोटिस जारी करने के बाद पेश या साबित नहीं किया गया था। यह साक्ष्य के आभाव का मामला है। वर्तमान मामले में, जांच के दौरान कोई सबूत नहीं दिया गया था, अतः अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमति के कारणों का अभिलेखन और अपने स्वयं के निष्कर्षों का अभिलेखन भी बिना किसी साक्ष्य पर आधारित

है।

29. **रूप सिंह नेगी** (उपरोक्त) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया हैः

> "**14.** निर्विवाद रूप से, विभागीय कार्यवाही एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही है। जाँच अधिकारी एक अर्ध-न्यायिक कार्य करता है। दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोप साबित होने चाहिए। जांच अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पक्षकारों द्वारा अभिलेख में प्रस्तुत सामग्री पर विचार करते हुए किसी निष्कर्ष पर पहुंचे। जाँच अधिकारी द्वारा सभी अभियुक्तों के खिलाफ जाँच के दौरान एकत्र किए गए कथित साक्ष्य को अनुशासनात्मक कार्यवाही में साक्ष्य नहीं माना जा सकता। उक्त दस्तावेजों को साबित करने के लिए किसी गवाह से पूछताछ नहीं की गई। प्रबंधन गवाहों ने केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत किये और इसकी विषय-वस्तु को साबित नहीं किया। जाँच अधिकारी ने अन्य बातों के अलावा, प्राथमिकी पर भरोसा किया, जिसे साक्ष्य नहीं माना जा सकता था।
>
> **15.** हम यहाँ पहले भी देख चुके हैं कि जांच अधिकारी द्वारा जिस एकमात्र मूल सबूत पर भरोसा किया गया है, वह अपीलार्थी द्वारा पुलिस के समक्ष किया गया कथित स्वीकारोक्ति है। अपीलार्थी के अनुसार, उसे उक्त स्वीकारोक्ति पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया था, क्योंकि उसे पुलिस थाने में प्रताड़ित किया गया था। अपीलार्थी के बैंक का कर्मचारी होने के कारण उक्त स्वीकारोक्ति को साबित किया जाना चाहिए था। कुछ ऐसे साक्ष्य सबूत में पेश कियेजाने चाहिए थे जो यह दर्शाते हों कि वह बैंक ड्राफ्ट बुक की चोरी में शामिल था। बेशक, कोई प्रत्यक्ष सबूत नहीं था। यहां तक कि कोई अप्रत्यक्ष सबूत भी नहीं था। रिपोर्ट का सार यह दर्शाता है कि जांच अधिकारी

ने उसे दोषी ठहराने का मन बना लिया था अन्यथा वह इस आधार पर आगे नहीं बढ़ता कि अपराध इस तरह से किया गया था कि कोई सबूत नहीं बचा था।

23. इसके अलावा, अनुशासनात्मक प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी के आदेश का किसी भी कारण से समर्थन नहीं किया जाता है। चूंकि उनके द्वारा पारित आदेशों के गंभीर नागरिक परिणाम होते हैं, इसलिए उचित कारण बताये जाने चाहिए थे। यदि जांच अधिकारी ने अपीलार्थी द्वारा की गई स्वीकारोक्ति पर भरोसा किया होता, तो इसका कोई कारण नहीं था कि आपराधिक न्यायलय द्वारा स्वयं के साक्ष्य के आधार पर पारित बरी करने के आदेश पर विचार क्यों नहीं किया जाना चाहिए था। दोष सिद्ध करने वाले अभिलेखों में प्रस्तुत साक्ष्यों को साबित करना आवश्यक है। निर्णय कुछ सबूतों के आधार पर लिया जाना चाहिए, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य हो। साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान विभागीय कार्यवाही में लागू नहीं हो सकते हैं लेकिन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू होते हैं। चूँकि जाँच अधिकारी की रिपोर्ट केवल प्रत्यक्षदर्शिता और अनुमानों पर आधारित थी, इसलिए इसे कायम नहीं रखा जा सकता था। जांच अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से किसी भी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं थे। जैसा कि सर्वविदित है, संदेह चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो, किसी भी परिस्थिति में कानूनी प्रमाण का विकल्प नहीं माना जा सकता है।"

30. **रूप सिंह नेगी** (उपरोक्त) मामले में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के पास उपलब्ध एकमात्र साक्ष्य अपराधी की स्वीकारोक्ति और प्रथम सूचना रिपोर्ट थी। वर्तमान मामले की तरह, उक्त मामले में भी दस्तावेजों को साबित करने के लिए किसी भी गवाह से पूछताछ

नहीं की गई और प्रबंधन ने वर्तमान मामले की तरह ही केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत कियेऔर सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि दोष सिद्ध करने वाली सामग्री को साबित करने की आवश्यकता है और निर्णय कुछ ऐसे साक्ष्यों के आधार पर किया जाना चाहिए, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य हों। और यह भी कहा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप को, तब तक सबूत के रूप में नहीं माना जा सकता है जब तक कि प्रमुख सबूतों द्वारा साबित नहीं किया जाता है।

31. (2010) 2 एस. सी. सी. 772 में रिपोर्ट की गई **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 27 और 28 में निम्नलिखित निर्णय दिया हैः

> "27. उपरोक्त उप-नियम का केवल अवलोकन करने से पता चलता है कि जब प्रतिवादी आरोप पत्र में स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने में विफल रहा था, तो जांच अधिकारी पर जांच में अपनी उपस्थिति के लिए एक तारीख तय करने का दायित्व था। केवल ऐसे मामले में जब सरकारी कर्मचारी निर्धारित तिथि की सूचना के बावजूद उपस्थित होने में विफल रहता है, जांच अधिकारी एकपक्षीय जांच करा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में भी आरोप पत्र में उल्लिखित गवाहों के बयान दर्ज करना जांच अधिकारी का दायित्व है। चूँकि सरकारी कर्मचारी अनुपस्थित है, इसलिए वह स्पष्ट रूप से गवाहों से जिरह का लाभ खो देगा। लेकिन फिर भी आरोपों को सिद्ध करने के लिए विभाग को जांच अधिकारी के समक्ष आवश्यक साक्ष्य पेश करने की आवश्यकता होती है। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि यह आरोप न लगे कि जाँच अधिकारी ने अभियोजक

के साथ-साथ न्यायाधीश की भूमिका भी निभाई है।

> 28. एक अर्ध न्यायिक प्राधिकरण में कार्य करने वाला एक जांच अधिकारी एक स्वतंत्र न्याय निर्णायक के पद पर होता है। उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकारी /सरकार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। उनका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, यहां तक कि दोषी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी यह देखने के लिए कि क्या अखंडित साक्ष्य आरोपों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है। वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। चूंकि किसी मौखिक साक्ष्य की जांच नहीं की गई है, इसलिए दस्तावेजों को साबित नहीं किया गया है, और इस निष्कर्ष पर विचार नहीं किया जा सकता है कि उत्तरदाताओं के खिलाफ आरोप सिद्ध हो गए हैं।"

32. सर्वोच्च न्यायालय ने उपरोक्त मामले में जाँच अधिकारी की भूमिका को परिभाषित किया है, जो जांच करते समय एक अर्ध न्यायिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करता है और एक स्वतंत्र निर्णायक के पद पर होता है। उनका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, दोषी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी यह देखने के लिए कि क्या अप्रमाणित साक्ष्य आरोपों को साबित करने के लिए पर्याप्त है, लेकिन वर्तमान मामले में, जाँच अधिकारी ने विभाग द्वारा प्रस्तुत किसी भी गवाह की जांच नहीं की और पाया कि आरोप साबित नहीं हुए हैं।

33. इस न्यायालय की एकल पीठ ने **अनिल कुमार** (उपरोक्त) के मामले में, जिसमें प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने दो दस्तावेजी साक्ष्यों के अलावा, आरोपों को साबित करने के लिए दस्तावेजों या आरोपों को साबित करने के लिए कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था,

अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने के आदेश, दंडात्मक आदेश और अपीलीय आदेश को रद्द कर दिया। **अनिल कुमार** (उपरोक्त) मामले में एकल पीठ के उपरोक्त निर्णय को इस न्यायालय की एक खंड पीठ ने 2017 की एल. पी. ए. सं. 63 में बरकरार रखा है।

34. अभिलेख में उपलब्ध सामग्री और इसमें पहले हुई चर्चा को देखते हुए, यह स्थापित होता है कि जांच के दौरान कोई मौखिक पूछताछ नहीं की गई थी, कोई मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत/जांच नहीं की गई, कोई दस्तावेज साबित नहीं हुआ हुए, तदनुसार, मेरी राय में, जांच स्वयं ही दोषपूर्ण हो गयी है।

35. अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने असहमति के वैध कारणों को दर्ज नहीं किया और आरोप सं. 1 और 2 पर अपना निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य के दर्ज कर लिया, जो या तो जांच के दौरान या जाँच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमति के कारणों को दर्ज करते समय एकत्र किया गया।

36. तदनुसार, मेरा मानना है कि जाँच के चरण में और अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा असहमति दर्ज करने के चरण में गंभीर प्रक्रियात्मक खामियाँ हैं। यह बिना किसी साक्ष्य का मामला है। इस प्रकार, पूरी जांच प्रक्रिया ही दोषपूर्ण है

37. इस प्रकार, मेरी राय में, दंड का आदेश और साथ ही अपीलीय प्राधिकारी का आदेश, जिसमे याचिकाकर्ता की पेंशन 100 प्रतिशत जब्त करने का आदेश शामिल है, कायम नहीं रह सकता और इसे रद्द किया जाता है। जाँच रिपोर्ट और व्यक्त की गयी असहमति को भी रद्द किया जाता है और याचिकाकर्ता को पर्याप्त अवसर देने के बाद, मामले को नए सिरे से जाँच के लिए वापस भेजा जाता है।

38. इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुत करने की तारीख से अधिकतम छह महीने की अवधि के भीतर नई जांच पूरी की जानी चाहिए।

39. उत्तरदाताओं को याचिकाकर्ता को गवाहों और दस्तावेजों की सूची के साथ आरोप(ओं) का एक पूरक ज्ञापन देने की स्वतंत्रता दी जाती है, जिस पर विभाग भरोसा करता है।

40. चूंकि सजा के आदेश को रद्द कर दिया गया है, इसलिए याचिकाकर्ता को अस्थायी पेंशन और कानून में स्वीकार्य अन्य सेवानिवृत्ति बकाया का भुगतान किया जाएगा।

41. परिणामस्वरूप, इस रिट आवेदन को स्वीकार किया जाता है।

42. लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

(अनिल कुमार सिन्हा, न्यायमूर्ति)

प्रभाकर आनंद/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।